[Conference-Composition of Colours :December,2014] ISSN- 2350-0530
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v2.i3SE.2014.3579
INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

चित्रकला की भाषा : रंग,रेखा एवं रुप

Tina Porwal
Research Scholar,
Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore
Email:sethiya.tina@gmail.com

मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के नाते सदैव इस प्रयत्न में रहा है कि वह अपनी अनुभुतीयों,भावनाओं तथा इच्छाओं को दूसरों से व्यक्त कर सके और दूसरों की अनुभुतीयों से लाभ उठा सके। इसके लिए उसे यह आवश्यकता पड़ी कि वह अपने को व्यक्त करने के साधनों तथा माध्यमों की खोज तथा निर्माण करे। इसी के फलस्वरुप भाषा की उत्पत्ति हुई और काव्य,संगीत,नृत्य, चित्रकला,मूर्तिकला इत्यादि कलाओं का प्रादुर्भाव हुआ। ये सभी हमारी भावनाओं को व्यक्त करने के माध्यम है। कोई अपनी भावनाओं को भाषा द्वारा व्यक्त करता है, कोई चित्रकला द्वारा तथा कोई नृत्य द्वारा। लक्ष्य तथा आदर्श सब का एक ही है, केवल माध्यम भिन्न – भिन्न है। इन्ही माध्यमों को हम कला की भाषा कहते है

चित्रकला

चित्रकला कलाकार कि भाव अभिव्क्ति की एक भाषा है। आज चित्रकला की भाषा का कोई निश्चित रूप नहीं रह गया है। चित्रकला में नित्य नई शैलीयॉ प्रतिदिन हमारें सम्मुख आ रही है। जिसके फलस्वरुप आधुनिक कला का लाभ कुछ व्यक्ति ही उठा पा रहे हैं। और पुरा समाज इस आन्नद का लाभ उठा पाने से वंचित रह राह है। जब तक चित्रकला कि भाषा का एक निश्चित रुप नहीं होगा और जब तक समाज में उसका प्रचार भली–भॉती नहीं होगा,तब तक चित्रकला का लक्ष्य सिध्द नहीं होगा। आजकल प्रत्येक आधुनिक कलाकार को इस समस्या का सामना करना पड़ता है। प्राचीन समय में कला की भाषा का एक निश्चित रूप था, जिससे पुरा समाज लाभ उठा पाता था। आज यदि हम प्राचिन समय की कला को आधार मानकर अपनी भाषा को प्रौढ़ बनाने का प्रयत्न करे तो हम सुगमतापुर्वक सफल हो पाएगे। इसलिए आज भी कुछ कलाकार प्राचीन समय से चली आ रही परम्परा का अनुगमन कर रहे हैं।

भाषा की सबसे बड़ी विशेषता सार्वभौमिकता होती हैं। जिससे समाज का प्रत्येक व्यक्ति सामंजस्य स्थापित करता है। कला का रूप,उसकी भाषा ऐसी होनी चाहिए जो सर्वग्राह हो सके। अब प्रश्न यह उठता है कि ऐसी चित्रकला कौनसी हो सकती है,जिसके रुप का अर्थ और उसके द्रवारा व्यक्त किए हुए भाव समाज के प्रत्येक व्यक्ति तक पहुॅच सके? इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए हमें कला के तत्वों का विवेचन कर लेना चाहिए,चित्रकला के तत्व रंग,रेखा व रुप हैं। रंग,रेखा व रुप ऐसे माध्यम है जिनके द्रवारा हम किसी चित्र का भाव समझते हैं।

रंग

रंगों की अपनी स्वतंत्र सत्ता होती हैं,उनकी अपनी दुनिया होती हैं। मानव जीवन के साथ–साथ चित्रकला में भी रंगों का महत्तव अद्वितीय हैं। निःसदेह रंगों की विविधता कलाकारों को विस्तृत क्षितिज प्रदान करती हैं। अभिव्यक्ति की सीमा रंग,रुप व रेखा से ओर व्यापक होती है अर्थात रंग ही है जो कलाकार की कृति को ओर अधिक आकर्षक एवम् भावपूर्ण बनाते हैं। इस प्रकार कह सकते है कि चित्र वही श्रेष्ठ होता है, जिसमें रंगों का उचित समायोजन हो। भारतीय चित्रकला षड़ग पर आधारित हैं। इसमें नाना वर्णों की सम्मिलित भंगिमा वर्णिका भंग कहलाती हैं। यह सबसे कठिनतम साधना है, क्योंकि रगों के माध्यम से ही चित्र के स्वभाव, वातावरण तथा अर्थ का ज्ञान होता है। चित्र में रंग,रेखा व रुप से आगे जाने का माध्यम है। चित्रकला 'रंग' और 'आकृति' के माध्यम से मनोवैज्ञानिक भावों को व्यक्त करने की एक पध्दति है। संगीत में ध्वनि व नृत्य में मुद्रा के द्रवारा चित्रकला में व्यक्त किया जाता हैं।

चित्रकला में सबसे अधिक महत्व रगों को दिया जाता हैं। क्योंकि मनुष्य की दृष्टि रंगीन वस्तुओं पर पहले जाती हैं। प्रारम्भिक काल में फूल–पत्तियॉ व पत्तथर इन सबसे रंग की खोज हुई होगी और मनुष्य ने अपनी मौलिक कल्पना से इसके विविध प्रयोग किए। यही कारण है कि चित्रकला विभिन्न काल खण्डों में रगों की विभिन्नता के साथ बदलती रही। मानसिक स्थितिनुसार भिन्न–भिन्न भावों को प्रकट करने में विभिन्न रगों ने महत्तवपूर्ण भूमिका निभायी। यही कारण है कि आदिम गुहावासियों से लेकर समकालीन चित्रकार तक सभी रंगों का आश्रय लेकर आत्माभिव्यक्ति करते आए हैं।

चित्र में रंगों का प्रयोग जितना संगतीपूर्ण,समीचीन और संतुलित होगा दर्शक के मानस पटल पर उसका प्रभाव उतना ही स्थायी होगा। एक ही रंग कई तरह के भावों को चित्रकला में व्यक्त कर सकते है और ऐसा करना कलाकार की चेतना पर निर्भर करता हैं। चित्र चाहे मूर्त हो या अमूर्त रंगों का समीचीन प्रयोग उसे एक ठोस आधार देता हैं। उदाहरण के लिए अवनीन्द्रनाथजी का कहना था कि जैसे पुरुष और नारी के मिलन में ही गृहस्थी का पूरा चित्र नहीं प्रकट हो जाता, संतान की आवश्यकता होती है उसी तरह दो सम्वादी रंगों के समावेश से ही चित्र पूरा नहीं हो पाता। थोड़ी वादी, यहा तक कि विवादी रंग भी देना जरुरी होती है

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

आधुनिक काल में अमूर्तन के हमें दो रुप दिखते हैं। एक तरह के अमूर्तन में रंगों का विस्फोट भी हो सकता है और उनका एक अलग प्रकार का आलोक भी। पश्चिम अमूर्तन में बड़े–बड़े कैनवासों पर रंगों का भारी संख्या में लगभग आंतकित करने वाला इस्तेमाल भी हुआ हैं। लेकिन दूसरे प्रकार के अमूर्तन में धैर्य, मेड़ीटेशन, रंग हीनता, (रंगों के होते हुए भी) आत्ममन्थन, आन्तरिक चिन्तन, ईबादत आदि कलाकार की दुनिया होती हैं।

रेखा

आदिम काल से ही रेखा का महत्व निर्विवाद हैं। गुहावासी आदि मानव की प्रतिकियाएं रेखांकन के रुप में सबसे पहले संसार के समक्ष आयी। रेखा, भावों की वह दिव्य शक्ति है जो मूक चित्र, चित्रित आकृतियों को हसा सकता है, स्तम्भित कर सकती है, मौन कर सकती है तथा स्थिर व भयभीत भी कर सकती हैं। रेखा की सम्भावनाएं अन्नत एवम् अपार हैं।

प्राचीन समय में कलाकार की रेखा को कम्प्यूटर के माउस (अब तो उसकी जरुरत भी नहीं रह गई हैं) से कोई खतरा नहीं था। आज स्थिति बहुत बदल चुकी हैं। नए कलाकार रेखांकन से मुक्त हो जाने का भी दावा कर रहे हैं। इंस्टालेशन के इस युग में अनेक युवा कलाकार यह कह रहे है कि हम रेखांकन बनाते है पर पैन या ब्रश से नहीं, कैमरे और माउस से। आज भी वरिष्ठ और चर्चित कलाकार यह मानने को तैयार नहीं हैं कि रेखांकन के बिना सच्चा कलाकार 'सर्वाइव' कर सकता हैं।

रुप

रुप कला का प्रमुख बिन्दु हैं, रुप का निर्माण चित्र भूमि पर चित्रण आरम्भ करते ही प्रारम्भ हो जाता हैं। इसी रुप में विभिन्न शैलियों का सीधा सम्पर्क होता हैं। सामान्यतः किसी भी चित्र में हम उस चित्र के विषय को खोजते है, इसमें से कुछ चित्रों का यर्थाथ चित्रण किया जाता हैं तथा कुछ में प्रतीक के माध्यम से। कलाकार विषय वस्तु को प्रस्तुत करता हैं जब विषय वस्तु में प्रतीको का उपयोग दिखाई देता हैं तब यह कह सकते है कि कलाकृति एक ऐसा बिम्ब है जो सीधा भावना एवम् कला का प्रतीक हैं। कला का रुपकार तर्क संगत ना होकर प्रस्तुतात्मक हैं। किसी धरातल पर होता हुआ रेंखाकन व वर्णों की भाव पर चढ़ती हुई परतें जब दृष्टिगोचर होती हैं तब रुप व विषय वस्तु दोनों कला तत्व उस धरातल पर स्पष्ट दिखाई देते हैं। रुप मात्र चित्र में ही दृष्टिगोचर नहीं होता वरन् उसे गंध, स्पर्श व संगीत रुपों में भी जाना जा सकता है, किन्तु इन सभी में दृष्टिगत रुपों को ही प्रमुख माना हैं। यदि रुप को परिभाषित करे तो यह कहा जा सकता हैं कि रुप वह क्षेत्र या स्थान है जिसका अपना निश्चित आकार तथा रंग होता है साधारणतयाः वस्तु को आकृति का रुप कहते हैं। इनको यदि और स्पष्ट करे तो रुप किसी भी पदार्थ का चित्र भूमि पर प्रथम दृश्य प्रत्यक्षीकरण हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः–

1 विनोद भारद्वाज,'कला का रास्ता'
2 राम चन्द्र शुक्ल,'कला और आधुनिक प्रवृत्तियॉ'
3 नन्द लाल बसु,'दृष्टि और सृष्टि'
4 डॉ.गिरिज किशोर अग्रवाल,'कला और कलम'
5 व्यास मैन,'द विजुअल आर्ट सिममबल एण्ड सिममबल ऑफ आर्ट'
6 जनवरी 2012 से जून 2012,'शोधनिधि'
7 कल्याण शर्मा,'कला के मूल सिध्दांत'
8 शर्मा और अग्रवाल,'रुपप्रद कला के मूल सिध्दांत'
9 अखिलेश,'अचम्भे का रोना'